हिन्दी साहित्य
विविध आयाम

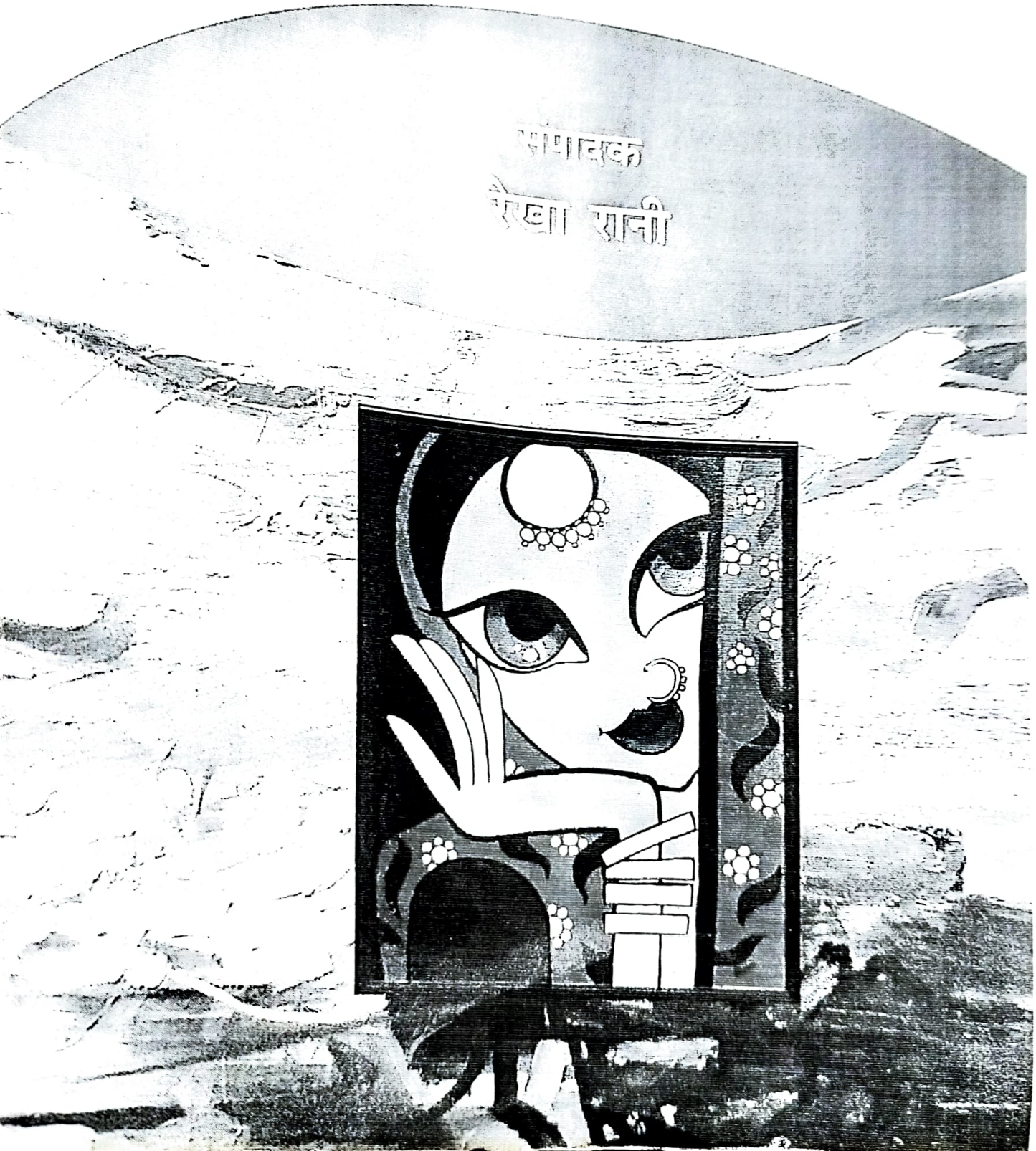

12. जयप्रकाश कर्दम की कहानी 'मूवमेंट' में नारी चेतना
विद्या के पी
13. दलित लेखकों की कहानियों में विविध आयाम
डॉ. बाबूलाल धनदे
14. दलित साहित्य में दलित विमर्श
संतराम
15. दलित साहित्य और जाति के प्रश्न
आनंद दास
16. हिन्दी दलित कविताओं में सामाजिक यंत्रणा और यथार्थ
अम्बर कुमार चौधरी
17. दलित लेखकों की आत्मकथाओं में विविध आयाम
सुमित्रा सैनी
18. दलित साहित्य में दलित विमर्श
गजानन्द मीणा
19. संत साहित्य में दलित विमर्श के विविध आयाम
डॉ. शक्ति बुद्धिराजा
20. किन्नर विमर्श : पोस्ट बॉक्स नंबर 203 नालासोपारा उपन्यास के परिप्रेक्ष्य में
रेश्मा एम. एल.
21. आधुनिक कहानी में विज्ञापन की दुनिया
डॉ. बबलू कुमार भट्ट
22. 21वीं सदी में दलित-साहित्य
डॉ. गीतू खन्ना
23. वृद्ध विमर्श
महेन्द्र कौर
24. नासिरा शर्मा और आकांक्षा पारे की कहानियों में नारी विमर्श
प्रा. आमलपुरे सूर्यकांत विश्वनाथ

संत साहित्य में दलित विमर्श के विविध आयाम

डॉ. शक्ति बुन्द्रराजा
असिसटैंट प्रोफेसर हिन्दी विभाग
गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज संतपुरा यमुनानगर

डॉ. हरिश्चन्द्र वर्मा के शब्दों में ,' संतों की वाणी में समाज के नकारात्मक और सकारात्मक दो पहलू हैं। नकारात्मक पहलू के अन्तर्गत उन्होंने जाति–पाति, छुआछूत , सामाजिक विषमता, पाखण्ड, अत्याचार, जीव हिंसा, भोगवाद, अंधविश्वास आदि मानवता वादी प्रवृत्तियों के प्रति विद्रोह किया है। ..... सकारात्मक पहलू के अन्तर्गत उन्होंने प्रेम, अहिंसा, सत्य, करुणा आदि शाश्वत मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा की है। ' [1]

वर्तमान में विमर्श शब्द जिस रूप में प्रयुक्त हो रहा है, उसे डॉ0 नामवर सिंह अंग्रेजी के डिस्कार्स शब्द का हिन्दी अनुवाद मानते हैं जिसका अर्थ है– वार्तालाप, सम्भाषण, बातचीत आदि। आधुनिक संदर्भ में इस शब्द को प्रयोग दलित एवं स्त्री शब्द के साथ जुड़ने पर विशिष्ट अर्थ देने लगा है। [2]

दलित विमर्श जाति आधारित अस्मिता मूलक विमर्श है। इसके केन्द्र में दलित जाति के अन्तर्गत शामिल मनुष्यों के अनुभवों कष्टों और संघर्षों को स्वर देने की संगठित कोशिश की गई है। यह एक भारतीय विमर्श है क्योंकि जाति भारतीय समाज की बुनियादी संरचनाओं में से एक है। [3]

दलित विमर्श के अन्तर्गत उन सभी ज्वलन्त प्रश्नों की चर्चा की जाती है जिनका सम्बन्ध भेदभाव से है। यह भेदभाव किसी भी स्तर का हो सकता है – जाति ,रंग, नस्ल, लिंग, या धर्म। ततकालीन हिन्दू समाज जो वर्ण व्यवस्था में बंटा था – सुवर्ण और अवर्ण। अछूत या शुद्र कहे जानी वाली दो श्रेणियों से सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से सदैव भेदभाव किया गया। उन्हें उत्पीड़ित और प्रताड़ित करना समाज के दूसरे वर्गों का जन्मसिद्ध अधिकार समझा जाता रहा। [4]

भक्तिकाल की समय अवधि में अनेक जातियों और संस्कृतियों के संगम

के साथ भारतीयों की वर्ण व्यवस्था कट्टर और मिथ्या आडम्बर में लिप्त होती चली गई। सामाजिक विघटन प्रचण्ड रूप लेता चला गया। वर्ण व्यवस्था की गहरी खाई में अनेक जातियों उपजातियों का भी अंकुर फूटने लगा था। वर्ण कट्टरता और धर्मों में व्याप्त छद्म आचरणों के कारण नए मत और धर्म विकसित होने लगे। जैसे आर्य अनार्य के परस्पर सम्पर्क से धार्मिक मान्यताओं की संकीर्णता के कारण वर्गों का उदय हुआ वैसे ही बौद्धों और हिन्दुओं के परस्पर सम्पर्क से अनेक नए पंथ और सम्प्रदाय प्रकाश में आए।
[5] तत्कालीन कथित पंडित और काजी , पुजारी और मुल्ला ,मन्दिर और मस्जिद, व्रत उपवास और रोजा, जनेऊ और सुन्नत, गोरक्षा और गोवध आदि अनेक कारणों से टकराव और अलगाव की स्थिति उत्पन्न होती रही। वर्णों की बढ़ती हुई खाई में जहाँ नए मत मतान्तरों का अस्तित्व समक्ष आया , वहीं अनेक जातियों का भी प्रादुर्भाव हुआ। कुम्हार,नाई, धोबी, धुना, चमार ,दर्जी, कुमावत, प्रजापति, लखारा, नामा आदि व्यवसायों के आधार पर नए जाति वर्ग सामने आए। कर्म ,व्यवसाय, पद और आचरण व्यवहार ने भी वर्ग निर्माण में महत्ती भूमिका निभाई।

उत्तर भारत में संत रामानन्द ने समाज में परिवर्तन लाने का बड़ा काम किया। संत काव्य में सहज भक्ति के सम्प्रदाय के पोषक हुए। नाम जाप द्वारा मोक्ष प्राप्ति का प्रलोभन बड़ा मददगार सिद्ध हुआ। दलित और घृणित समझी जाने वाली जातियों को अपनी बात कहने का अवसर मिला। उनसे जुड़े अनेक भक्तों को अपनी काव्य प्रतिभा ,धर्मानुभूति की क्षमता और पवित्र जीवन यापन के नियम से ही संत पद के साथ समाज में मान सम्मान की प्राप्ति हुई।

भक्ति की इस नव जागृति से दलित एवं उपेक्षित जातियों में उत्साह का संचार हुआ और उन्हें तत्कालीन धर्म अधिकारियों ब्राह्मणों के साथ वाद–विवाद और धार्मिक चर्चा का हौसला हुआ। कबीर ने काशी के ब्राह्मणों को आढ़े हाथों लिया –

तू ब्राह्मण मैं काशी का जुलाहा।

हमारे कैसे लोहु तुम्हारे कैसे दूध।
तुम कैसे ब्राह्मन पांडे ,हम कैसे सूद।[6]

तत्कालीन समाज मनुस्मृति द्वारा निर्धारित मानदण्डों पर आधारित व्यवस्था में जीवन यापन कर रहा था जिसमें जातिगत संकीर्णताओं में भारतवासियों की मानसिकता को झिझोंड़ना आवश्यक था। इस मानसिकता

...कारण जो जातियों को सुकर्म करने के लिए प्रेरित करना, उनकी सोई हुई आत्मा को जगाना आवश्यक हो गया था। कवि रविदास का मानना है कि जाति से कोई छोटा बड़ा नहीं होता। मनुष्य के बड़प्पन की कसौटी तो प्रभु भक्ति से होती है -

जाति ते कोई पद नहीं पहुँचा, राम भक्ति विसेख रे[7]
जात पात के फेर महि, उरझि रहइ सब लोग
मानवता को खात हई रविदास जात कर लोग[8]

एक अन्य उदा० देखिए –

ब्राह्मन खत्री बैस सूद, रविदास जन्म ते नाहिं
जे चाहइ सुबरन कउ, पावइ करमन माहिं।[9]
रविदास जन्म के कारनै होत न कोउ नीच।
नर को नीच करि डारि है औछे करम को कीच।[10]

तत्कालीन समाज में जात पात का रोग मानवता का भक्षक बना हुआ था। उस समय दया भावना से विहीन हुए लोग नीच निकृष्ट कर्म करने वाले को ओछी जाति कहकर फटकार युक्त भाषा से निरन्तर उनका तिरस्कार करते थे। संत रविदास ने मानव को पाँच विकारों से सावधान करते हुए गुरु की शरण में रहते हुए सत्कर्म करने की प्रेरणा दी है–

पंच दोष तजि जो रहई, संत चरण लव लीन।
रविदास ते नर जानई, ऊँचह अरु कुलीन।[11]

संत रविदास ने सच्चे सुख की प्राप्ति के लिए परिश्रम से अपने कर्म को ही प्रभु मानने की बात की है–

श्रम कई ईसर जानि के, जउ पूजहिं दिन रैन,
रविदास तिन्हहिं संसार मंह, सदा मिलहिं सुख चैन
प्रभु भक्ति श्रम साधना जग मंह जिन्हहिं पास
तिन्हहिं जीवन सफल भयो सत् भाखै रविदास।[12]

निरन्तर प्रभु नाम का स्मरण करते हुए आत्मविश्वास से कर्म करने की प्रेरणा देते हैं

जिह्वा सों ओंकार जप, हत्थन सों कर कार।[13]

वह ऐसे राज्य की संकल्पना करना चाहते हैं जिसमें सब समान हों कोई भेदभाव न हो।

ऐसा चाहौं राज मैं, जहाँ मिलै सबन को अन्न
छोट बड़ो सब सम बसै, रविदास रहै प्रसन्न।[14]

तत्कालीन समाज में व्याप्त वर्ण व्यवस्था ने समाज को भी बाँटी

के कारण जो जातियों को सुकर्म करने के लिए प्रेरित करना, उनकी सोई हुई आत्मा को जगाना आवश्यक हो गया था। कवि रविदास का मानना है कि जाति से कोई छोटा बड़ा नहीं होता। मनुष्य के बड़प्पन की कसौटी तो प्रभु भक्ति से होती है –

जाति ते कोई पद नहीं पहुँचा,राम भक्ति विसेख रे'[7]
जात पात के फेर महि,उरझि रहइ सब लोग
मानवता को खात हइ रविदास जात कर लोग[8]

एक अन्य उदा० देखिए –

ब्राह्मन खत्री बैस सूद, रविदास जन्म ते नाहिं
जे चाहइ सुबरन कउ, पावइ करमन माहिं।[9]
रविदास जन्म के कारनै होत न कोउ नीच।
नर को नीच करि डारि है ओछै करम को कीच।[10]

तत्कालीन समाज में जात पात का रोग मानवता का भक्षक बना हुआ था। उस समय दया भावना से विहीन हुए लोग नीच निकृष्ट कर्म करने वाले को ओछी जाति कहकर फटकार युक्त भाषा से निरन्तर उनका तिरस्कार करते थे। संत रविदास ने मानव को पाँच विकारों से सावधान करते हुए गुरु की शरण में रहते हुए सत्कर्म करने की प्रेरणा दी है–

पंच दोष तजि जो रहई ,संत चरण लव लीन।
रविदास ते नर जानई, ऊँचह अरु कुलीन।[11]

संत रविदास ने सच्चे सुख की प्राप्ति के लिए परिश्रम से अपने कर्म को ही प्रभु मानने की बात की है–

श्रम कई ईसर जानि के ,जउ पूजहिं दिन रैन,
रविदास तिन्हहिं संसार मंह ,सदा मिलहिं सुख चैन
प्रभु भक्ति श्रम साधना जग मंह जिन्हहिं पास
तिन्हहिं जीवन सफल भयो सत् भाषै रविदास।[12]

निरन्तर प्रभु नाम का स्मरण करते हुए आत्मविश्वास से कर्म करने की प्रेरणा देते है

जिह्वा सों ओंकार जप, हत्थन सों कर कार।[13]

वह ऐसे राज्य की संकल्पना करना चाहते है जिसमें सब समान हो कोई भेदभाव न हो।

ऐसा चाहौं राज मैं, जहाँ मिलै सबन को अन्न
छोट बड़ो सब सम बसै, रविदास रहै प्रसन्न।[14]

तत्कालीन समाज में व्याप्त [illegible] व्यवस्था ने समाज को [illegible]

Scanned with Can

शोषक–शोषित, अमीर–गरीब, में बंटा हुआ था। शोषक वर्ग द्वारा शोषित वर्ग का इतना दमन हुआ कि समानता असमानता की खाई बढ़ती गई। शोषित वर्ग समयान्तर के साथ दलित कहा जाने लगा। शोषित वर्ग निरन्तर शोषण के कारण गरीबी के दलदल में धंसता चला गया। संत कवियों ने तत्कालीन शोषक वर्ग की मंशा को समझते हुए अपने विचार अभिव्यक्त किए–

धन संचय दुख देत है धन त्यागे सुख होय
रविदास सीख गुरुदेव की धन मत जोरे कोय [15]

संत बुल्लेशाह ने भी जात पात के भेद को व्यर्थ माना है। उनका मानना है कि सम्पूर्ण मानवता की उत्पत्ति एक ही रव से हुई है अतः जात पात की विचारधारा व्यर्थ है–––

कैसे हिंदू तुरक कहाया सब ही एकै द्वारै आया
कैसे ब्राह्मण कैसे सूदा ,एक हाड़ चाम तन गूदा।

संत धरनी दास ने जातिगत अहंकार पर भी करारा व्यंग्य किया है। उनका मानना है कि भवसागर से पार उतरने के लिए मनुष्य के सत्कर्म ही सहायक होते हैं। जाति किसी व्यक्ति के भले बुरे होने का प्रमाण नहीं देती अपितु उसके कर्म उसे अच्छा या बुरा बनाते हैं–

करनी पार उतारि है धरनी कियो पुकार
साकित ब्राह्मन नहीं भला, भक्त भला चमार। [16]

संत रज्जबदास ने जाति विमर्श को व्यर्थ बताया है। उनका विचार है कि सभी जीव एक ही ब्रह्म से उत्पन्न हुए हैं और अंत में उसी ब्रह्म में ही विलीन हो जाते हैं और उसी ब्रह्म की जोत में एकाकृत हो मुक्ति को प्राप्त हो जाएंगे –

कुल मरजाद मेंड सब भागी, बैठा भाठी नेरा।
जाति पांति कुछ समझै नाहीं किसकूं करै परेरा। [17]

संत सुन्दरदास ने जातिगत ऊँच नीच के भेदभाव को भ्रान्ति मानते हैं और इसे मिथ्या अभिमान मानते हुए त्यागने का संदेश देते हैं –

कतहु भूलौ नीच है कतहु ऊँची जाति
सुदंर या अभिमान करि दोनों ही कैं रीति[18]

संत दादू दयाल ने दयालुता ,सरलता और विनम्रता का ज्ञान देती है। यह वर्गहीन समाज के निर्माण का संदेश देती है। छुआछूत ,जात–पात ऊँच–नीच मजहबी धर्म सम्प्रदाय आदि को मानव निर्मित और काल्पनिक बताती है। उन्होंने सबको उस एक परमात्मा की संतान मानते हुए जात– पात की विभेदात्मक भावना को व्यर्थ माना है –

Scanned with Ca

चरन कौन दिखाइये, करि चरनन की छाँहि।

संत चरनदास के अनुसार, 'ब्राह्मण वही है जो ब्रह्म को पहचानता है। पाँचों विकारों को अपने बस में कर दया को अपना धर्म मानता है। आत्म विद्या को जानता है, शील जिसका बाह्य परिधान है और वह परमात्मा में ध्यान लगाता है–

ब्राह्मन सो जो ब्रह्म पिछानैं, बाहर जाता भीतर आनै।
पाँचों बस करि झूंठ न भाखै, दया जनेऊ हिरदे राखै।
आतम विद्या पढ़े पढ़ावै, परमातम को ध्यान लगावै।
काम क्रोध मद लोभ न होई, चरनदास कहै ब्राह्मन सोई।

इन संत कवियों ने समाज में व्याप्त आचारिक और मानसिक विकारों को दूर कर आदर्श मानव समाज के निर्माण का प्रयास किया। इसके लिए उन्होंने प्रेम को ही सबसे बड़ा साधन माना। पारस्परिक वैमनस्य को दूर करने के लिए संत कवियों के प्रयास वन्दनीय और सराहनीय हैं। डॉ0 नामवर सिंह अपनी पुस्तक 'दूसरी परम्परा की खोज' में लिखते हैं– भारतीय ग्राम समाज के किसानों और मजदूरों को दिल्ली ओर आगरा में बैठे विधर्मी बादशाह से उतनी शिकायत नहीं थी, जितनी कि सवर्ण जातियों के जमींदारों और पुराहितों या सेठों से थी। इन्हीं सवर्णों के व्यवहार के परिणाम स्वरूप आज भी ये विमर्श साहित्य का ज्वलन्त विषय है।

संदर्भ सूची

1. डॉ0 हरिश्चन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य का इतिहास, मंथन पब्लिकेशन्स रोहतक ,1982 पृ0 118
2. डॉ0 कृष्णा जाखड़ ,प्रभा खेतान के साहित्य में नारी विमर्श, राजस्थानी ग्रन्थागार जोधपुर 2012 ,पृ0105
3. विकी पीडिया डॉट कॉम
4. डॉ0 सीमा रानी, अस्मिता मूलक विमर्श और साहित्य, अक्षर पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स ,पृ0 12
5. डॉ0 वेदव्रत शर्मा , कबीर और उनकी वाणी का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन, आशा प्रकाशन गृह करोलबाग नई दिल्ली ,पृ0 53
6. डॉ0 पुष्पपाल सिंह, कबीर ग्रंथावली , प्रथम संस्करण ,नमन प्रकाशन नई दिल्ली, पृ0 60
7. रैदास की वाणी, वेल्वेडियर प्रैस, प्रयाग ,पृ023
8. आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद, रविदास दर्शन, गुरु रविदास संस्थान चण्डीगढ

Scanned with Ca

पृ0 139
...र गौतम, संत रविदास की निर्गुण भक्ति निर्मल पब्लिकेशन्स, ए–139
...दरा दिल्ली 94 पृ0 51
...न दास भनोत, रविदास वचन सुधा ,लोक सम्पर्क विभाग हरियाणा
संस्करण 1981 पृ0 142
आचार्य पृथ्वी सिंह आजाद, रविदास दर्शन, गुरु रविदास संस्थान चण्डीगढ़
पृ0140
... डॉ0 ऋषि पाल, वैश्वीकरण के दौर में ,हिन्दी साहित्य की प्रासंगिकता,लता
साहित्य सदन गाजियाबाद ,2016 पृ0 97
वही , पृ0 99
वही , पृ0 97
...रि शास्त्री, संत सरोज , पृ0 1– 14
... वियोगी हरि ,संत सुधा सार , संस्करण 1953 (धरनीदास) पृ0 49
सुन्दर सवैया ग्रंथ, पृ0 28
डॉ0 बृजलाल वर्मा ,रज्जब वाणी प्रथम संस्करण 1963 पृ0 231
डॉ0 पुष्पपाल सिंह, कबीर ग्रथावली , प्रथम संस्करण ,नमन प्रकाशन नई
दिल्ली, पृ0
...न दास भनोत, रविदास वचन सुधा, लोक सम्पर्क विभाग हरियाणा
संस्करण 1981 पृ0 19
डॉ0 युगेश्वर, कबीर समग्र प्रथम खण्ड, पृ0 278
नानक वाणी , पृ 231
संतवाणी संग्रह, भाग पहला ,पृ0 156
संतवाणी संग्रह, भाग पहला ,पृ0 156

Scanned with CamS